SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

efFkyh'kj.k xIr d ukVdk e xhrkRed lokn

lt; dekj ¢lg] (Ph.D.) राजभाषा विभाग
भारतीय स्टेट बैंक, स्थानीय प्रधान कार्यालय, पटना, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
lt; dekj ¢lg] (Ph.D.) राजभाषा विभाग
भारतीय स्टेट बैंक, स्थानीय प्रधान कार्यालय, पटना, बिहार, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 02/02/2023
Revised on : -----
Accepted on : 09/02/2023
Plagiarism : 00% on 02/02/2023

'kk/k lkj

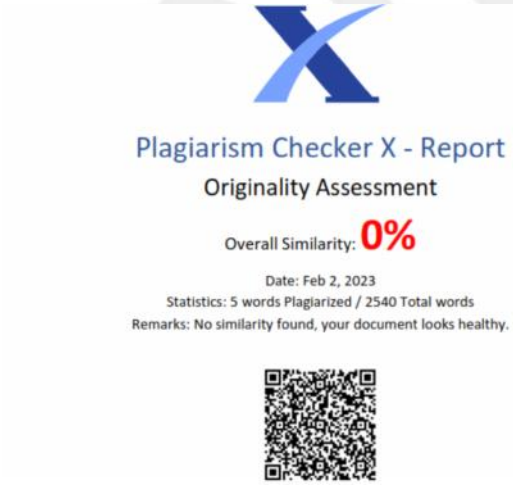

मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य में सफल एवं लोकप्रिय कवि माने जाते हैं। इस उक्ति को सिद्ध करना आवश्यक इसलिए नहीं है कि गुप्त जी को राष्ट्रकवि की उपाधि मिली थी। गुप्त जी का समय राजनैतिक दृष्टि से जागरण का काल था। गांधी जी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता आंदोलन दिनोदिन बलवती होता जा रहा था। स्वदेशी बोध महत्व के केंद्र में था, वहीं साहित्यिक मोर्चा आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी संभाल रहे थे। समसामयिक विषयों से कविता खड़ी बोली हिंदी के माध्यम से जुड़ रही थी। हिंदी काव्य से ब्रजभाषा विदा हो रही थी। ऐसे परिवेश में मैथिलीशरण गुप्त जी का विराट कवि व्यक्तित्व हिंदी साहित्याकाश पर छाया। यह वह समय था जब हिंदी गद्य को साहित्य में प्रधानता मिल रही थी। गद्य विधा में नाटक की रचना का अपना ही महत्व था। भारतेन्दु काल में नाटक को जो महत्व प्राप्त हुआ था, वह धारा आगे भी बहती रही। बाद के समय में तो नाटक एक प्रमुख विधा के रूप में हिंदी साहित्य में स्थापित हो गई। तत्कालीन साहित्यिक परिवेश में कवि गुप्त ने भी नाटक लिखे। नाटकों का संस्कृत से अनुवाद भी किया। यह शोध का आकर्षक विषय है कि गुप्त जी के नाटक किस श्रेणी के थे और उन्हें प्रसिद्धि क्यों नहीं मिली....? प्रस्तुत पत्र में यह प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है कि नाटक की रचना भले ही गुप्त जी ने की है परंतु उनका कवि व्यक्तित्व उन पर सदैव हावी रहा। गुप्त जी अपने नाटकों में नाटककार कम और कवि अधिक दिखते हैं। इसी दृष्टिकोण से उनके नाटकों का प्रस्तुत है– एक सर्वेक्षण।

e[; 'kCn

efFkyh'kj.k xIr] ¢gnh lkfgR;] vkndyu] ukVd] dfo-

'नाटक' साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा रहा है। इसे संपूर्ण अभिव्यक्ति का माध्यम कहा जाता है। इसमें वाच्यिक और आंगिक दोनों अभिव्यक्तियां होती हैं इसलिए यह सहज बोधगम्य होता है, इसकी संप्रेषणीयता प्रभावी होती है। पाठक इसे पढ़कर रसानुभूति करते हैं तो दर्शक इसका मंचन देखकर। यह हर वर्ग के लोगों की पसंद रहा है– शिक्षित–अशिक्षित, शहरी–ग्रामीण आदि। काव्य साहित्य चर्चा का उपलब्ध आदि ग्रंथ है– 'नाट्यशास्त्र'। आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र की रचना की और उसकी व्याख्या में काव्य सिद्धान्त, रस सिद्धान्त, अलंकार सिद्धान्त, काव्यातमा, काव्यहेतु आदि विषयों पर मनीषियों एवं परवर्ती आचार्यों ने अनेक ग्रंथ लिखे। इस उल्लेख से यह स्पष्ट स्पष्ट होता है कि नाटक साहित्य की बहुत ही महत्वपूर्ण विधा है और नाटक लिखना किसी भी साहित्यकार के लिए अति सम्मान की बात। इसकी एक शास्त्रीय कसौटी है, इसके अभिन्न कुछेक तत्व हैं, इसमें कई चीजें वर्जित हैं तो कई अनिवार्य भी। नाटक को सर्वाधिक प्रभावशाली विधा इसलिए माना जाता है क्योंकि इसके माध्यम से पाठकों और दर्शकों तक अपनी बात, अपना संदेश अपेक्षाकृत सहजतापूर्वक पहुंचाया जा सकता है।

गुप्त जी का समय हिन्दी साहित्य का वह समय था जब महावीर प्रसाद द्विवेदी जी खड़ीबोली में गद्य लिखने को प्रश्रय दे रहे थे। नाटक लिखने के लिए अनुकूल माहौल था। द्विवेदी जी के साहित्यिक शिष्य मैथिलीशरण गुप्त जी ने भी नाटक लिखे। यह भी सच है कि गुप्त के आगे नाटकों के तत्व या फिर नाटकों की शास्त्रीयता शर्त बनकर नहीं रही। वैसे भारतीय नाट्य परंपरा का उन्होंने अनुकरण किया है, बावजूद इसके उनके नाटकों की अनेक सीमाएं हैं। नाटकों की रचना में गुप्त जी स्वतंत्र नाटककार नहीं दिखते, उनके नाटकों को पढ़ने से ऐसा लग जाता है कि किसी कवि ने नाटकों की रचना की है। उनके पात्रों के संवाद अधिकांशतः कावयिक हैं। गुप्त जी ने इसका ध्यान नहीं रखा है कि काव्यिक अभिव्यक्ति समस्त पात्रों के मुंह से शोभा नहीं देती। इतना होते हुए भी गुप्त जी के नाटक कथ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि गुप्त जी ने अपने कथ्य को अभिव्यक्त करने के लिए ही नाटक के कलेवर का उपयोग किया है।

गुप्त जी ने अपने नाटक 'तिलोत्तमा' में परंपरागत प्रस्तावना को रखा है जिसमें नान्दी, सूत्रधार और पारिपार्श्विक उपस्थित हैं। सूत्रधार गुप्त जी की काव्य–कला की प्रशंसा करते हुए कहता हैः

"क्यों नहीं, उपस्थित सज्जनों का एक और कारण से भी उसमें स्वाभाविक अनुराग होगा, सरस्वती के उपासक सहृदयजन उसकी रचनाओं को पहले ही विशेष रूप से अपना चुके हैंः

सुंदर भाव देख सब कोई उसको अपना लेता है;
पर संबंध विशेष हृदय को और अधिक सुख देता है।
देख वसन्त–विकास बिहंगम गाते हैं, सुख पाते हैं;
किन्तु विटप उसको विलोक कर फूले नहीं समाते हैं।।

(नेपथ्य में)

फूले नहीं समाते, सुख हैं अपूर्व पाते हैं;
उत्सव सहर्ष करके सुध भूल भूल जाते।
बाजे बाजा बजा कर जातीय गीत गाते,
उत्साह से हमारी जय हैं सभी मनाते।।"

गुप्त जी ने इस नाटक की प्रस्तावना में ही मनोरंजन के साथ शिक्षा देने की बात कही हैः

ukUnh अद्भुत, अपूर्व अगर्भजा, प्रत्यक्ष अपनी ही कला–
श्री मैथिली के रूप की ज्योतिः शिखा वह निश्चला।
सुरपुर–जयी लंकेश रावण शलभ–सा जिसमें जला,
सत्पथ दिखा कर सर्वदा करती रहे सब का भला।।

l=èkkj% बड़े संतोष की बात है कि ऐसे सहृदय सज्जनों के सामने हमें अभिनय दिखाने का अवसर प्राप्त हुआ है। किसी ने बहुत ठीक कहा हैः–

सहृदय जन ही काव्य का लेते हैं आनंद। पीते हैं अलिवृंद ही अमलकमल मकरंद ।।
चन्द्रकान्त होते द्रवित पाकर चन्द्रालोक। पत्थर नहीं पसीजते उसका उदय विलोक ।।

ikfjikÜoZd% क्या कहना है, नाटक का मुख्य उद्देश्य ही यही है कि उससे मनोरंजन के साथ–साथ शिक्षा की प्राप्ति भी हो। कहा भी हैः

रहे मनोरञ्जन न क्यों शिक्षा–रहित निबन्ध। है उस कुसुम–समान ही जिसमें नहीं सुगन्ध।।

नाटक की नायिका तिलोत्तमा पांचवें अंक में उपस्थित होकर आप ही आप में कहती है– आहा! कैसा अपूर्व सृष्टि–सौंदर्य हैः (गान)

खिलती हुई कुसमावली को चपल अलि–दल चूमता,
शीतल सुगद्यध समीर भी है धीर गति से घूमता।
मद–तुल्य झरनों के अमल जल में कमलकुल हँस रहा,
वर विन्ध्य गिरि भी आज मानो मत्त गज–सा झूमता।।

इस नाटक के खलनायक सुंग और उपसुंग (दोनों असुर) जब दोनों तिलोत्तमा को प्राप्त करने के लिए जब आपस में भिड़ जाते हैं और अंत में दोनों में कोई नहीं बचता है। उनकी मृत्यु से पूर्व भयंकर नामक एक सेवक आता है और अपने बलशाली स्वामी का हाल देख कर पूछता है कि हे नाथ! यह सब कैसे हुआ? तब सुंद उसे बताता हैः

कारण है उस मोह का रमणीधन का लोभ।
और मद्य की मोहिनी मादकता का क्षोभ।।

वह आगे कहता है : सुंद और उपसुंद का है सब से अनुरोध।
सावधान, देखो, कभी उठे न बंधु–विरोध।।

इस प्रकार असुरों द्वारा यह संदेश देना कि आपसी विरोध 'नाश' का कारण बन जाता है, नाटक का शिखर स्थल है, परंतु सदेश की काव्यिक प्रस्तुति नाटककार पर गुप्त जी के कवि हृदय का हावी होना सहज ही माना जा सकता है।

नाटक के अंत में स्वयं इन्द्र आकर तिलोत्तमा की प्रशंसा करते हैंः

"करके दग्ध विपक्ष रूप–शिखा की ज्योति में।
सुरकुल की प्रत्यक्ष जयलक्ष्मी तू ही हुई।।
इसलिए बता, हम तेरा क्या हित करें?"

'चंद्रहास' गुप्त जी का वह नाटक है जिसमें नियति का चमत्कार दिखाया गया है साथ ही यह भी दर्शाया गया है कि अपने कर्मों का फल हर किसी को भोगना ही पड़ता है। यहाँ भी गालव जब बालक चंद्रहास के विषय में सौंदर्य और तेज वर्णन करता है तो अभिव्यक्ति काव्यिक ही होती हैः

सौंदर्य का विमल हो जिसमें विकास,
होता विशेष उसमें प्रभु का प्रकाश।
निष्पंक बालक मुखों पर श्रीनिवास,
प्रायः सदैव रखते निज चंद्रहास।।

इस नाटक में गुप्त जी ने नियति का मानवीकरण किया है जिसकी पद्यात्मक अभिव्यक्ति का उदाहरण हैः

fu;fr % जो पुष्प से मृदु तथा पवि से कठोर,
मैं हूँ वही नियति सुंदर और घोर।
है कौन जो कर सके गति का निरोध?
मेरा विरोध बस है अपना विरोध।।
मेरे अधीन समझो यह सृष्टि सारी,
मैं रंक को नृप करूँ, नृप को भिखारी।।

चंद्रहास कालांतर में युवराज बनता है, फिर राजा। उसका शासन धर्म पर आधारित है और अपनी प्रजा को खुश रखना वह अपने राजपद की सिद्धि मानता है। वह स्पष्ट कहता हैः

प्रजा के लिए ही नृपाद्योग है, इसी के लिए राजी का योग है।
प्रजाश्रेय ही सर्वदा ध्येय है, इसी से प्रजा–सम्मति ज्ञेय है।।

यह नाटक कर्तव्यनिष्ठा को महत्व देने वाला नाटक है। कौन्तलप जब चन्द्रहास को राजदण्ड सौंपता है तो यह स्पष्ट कहता हैः

dkU;fi % वत्स चन्द्रहास! तुम योग्य हो, तुमसे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। तो भी, कर्त्तव्य के अनुरोध से मुझे कहना ही चाहिए। यह राजदण्ड, जो मैं तुम्हें सौंपता हूँ, कोई साधारण दण्ड नहीं। इस पर एक बड़े भारी जनसमूह का हिताहित अवलंबित है। आज तुम इस राज्य के अधीश्वर हुए। राज्य और शासन का उद्देश्य तुमसे छिपा नहींः (भुजंगी)

प्रजा वर्ग के ही लिए राज्य है, हमें स्वार्थ चिन्ता सदा त्याज्य है।
इसी अर्थ है राज–सत्ता सभी , न हो देश में दुर्व्यवस्था कभी।।

'अनघ' नाटक के मंगलाचरण में गुप्त जी लिखते हैंः

राम कृष्ण ने जहां आप अवतार लिया है, आ आकर बहू बार भू–भार दूर किया है।
वहाँ भला क्यों देव दयामय बुद्ध न आते, जिनके शुद्ध चरित्र आज जातक हैं गाते।।

नाटक का प्रारंभ अरण्य से होता है जहां नाटक का मुख्य पात्र मघ इस गान के साथ उपस्थित होता हैः

विषम विश्व का कोना है; मेरा जहां बिछोना है।
पर मैं सो जाऊँ या जागूँ? कैसे इसकी तंद्रा त्यागूँ?
यह जगाना या सोना है? विषम विश्व का कोना है।।

'अनघ' गुप्त जी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाट्य रूपक है। वैसे यह नाटक बौद्ध संस्कृति पर आधारित है किन्तु इसके पात्र गांधीयुग के प्रतिनिधि प्रतीत होते हैं। राजधर्म–पालन में नरेश की सहायता के लिए रानी स्वयं राज्य की वर्तमान स्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करती है और उन्हें यह समझ लेने में अधिक समय नहीं लगता कि शासकीय अधिकारी उनके साथ छल कर रहे हैं। वे निर्दोष व्यक्तियों पर झूठे आरोप लगाकर स्वार्थ–साधन कर रहे हैं। इसीलिए मगध के न्यायालय में वह एक ओर सैनिकों को सुरभि का विरोध करने से रोकती हैः

हट जाओ हे शूर, न छेड़ो इस बाला को, शांत करो भगवान, शाप की इस ज्वाला को।।

और दूसरी ओर महाराज को समझाती हैः

छले गए हैं प्रभो, आप, क्षण धीरज धरिए।

अनघ नाटक बौद्ध संस्कृति पर आधारित होते हुए भी समसामयिक संदेशों का वाहक है। मचल ग्राम का मुखिया प्रशासन–व्यवस्था का अंग होने के कारण मघ के लोकोपकारी कार्यों का विरोधी है, क्योंकि उससे शासन को प्राप्त होने वाले राजस्व में कमी आती है। वह मघ को 'ढोंग का खंभ' मानता है और उसका दंभ निकाल डालने

के लिए कुछ भी कर देने के लिए सन्नद्ध है। वह मघ के दल में कुछ ऐसे लोगों को प्रविष्ट करा देता है जो प्रत्यक्षतः सहयोगी दीखने पर भी दल के लिए घातक बन सकें। वह सुमुख को अपना उपकरण बनाता है। उसे पदोन्नति का प्रलोभन देकर वह काम सौंपता हैः

जाना होगा नृप निकट, वहाँ खड़े रहना तने, निज दल के साक्षी बने.....

नाटक का नायक मघ बुद्ध का साधनावतार है। कवि ने उसमें भगवान बुद्ध की करुणा को साकार किया है। उसका जीवन–लक्ष्य हैः

न तन सेवा, न मन सेवा, न जीवन और धन सेवा;
मुझे है इष्ट जन सेवा, सदा सच्ची भुवन दृसेवा।।

स्वयं मघ के शब्दों में उसका परिचय इस प्रकार हैः

समय दृभागी हूँ, नहीं समय हूँ, नहीं मारुत, पर मारुतमय हूँ।

मघ की निष्काम सर्व–सेवा और कृतघ्न समाज के असहयोग तथा विरोध–भाव ने उसके भीतर एक गद्यभीर अंतर्द्वंद्व की सृष्टि कर दी है। यह दूसरी बात है कि वह अंतर्द्वंद्व उसे विजित या कर्त्तव्यपराङ्गमुख नहीं कर पाताः

आह दीनता यह तेरी, विश्वप्रियता की प्रेरी।
करती है लाचार मुझे, कैसे रोकूँ और तुझे?
तेरे भरे आंसुओं पर, वारूँ मैं मुक्ता भर–भर।।

इसी नाटक में ऐसे भी प्रसंग हैं जहां गुप्त जी की गृहस्थ भावना के दर्शन होते हैं। नायक मघ घर आकर जब अपनी माँ से मिलता है तो दोनों के बीच स्वाभाविक संवाद होते हैं, परंतु पद्यात्मकः

e?k% आह! क्षमा कर अम्ब, मुझे; हुआ विशेष विलम्ब मुझे।
मेरे बिना न खाने का– हाथ क्यों कष्ट उठाने का?
ek% कष्ट? अबोध बताऊँ क्या? जी की बात जताऊँ क्या?
तू माँ नहीं कि जान सके, माँ का मन पहचान सके।
हैं निश्चिंत पिता तेरे, सुनते नहीं वचन मेरे।
वे बन्धन–से तोड़ रहे, तुझे तुझी पर छोड़ रहे।

इस प्रकार हम माँ और बेटे के बीच घरेलू संवाद में भी नाटककार की कवि प्रतिभा का साक्षात्कार करते हैं। मघ इस नाटक में मातृत्व को महिमामंडित करता है और लुटेरों को मनुष्य बनाता है। इस गीतिनाट्य के अंतिम दृश्यों में जनसेवा विरोधी दुर्जन मुखिया मघ को बंदी बनाता है किन्तु उसकी मुक्ति होती है और राजा–रानी मघ की शक्ति को पहचानकर उसका अभिवादन करते हैं। नाटक का अंत इस प्रकार होता हैः

jkt k% क्षमा करो हे भद्र, तुम्हें अति कष्ट हुआ है, पर मेरा भ्रम आज यहाँ सुस्पष्ट हुआ है।
e?k% देव, परम सौभाग्य आज इस जन सेवी का; दर्शन मुझको मिला इसी मिष इस देवी का।
इनके रहते हुए राज्य में किसको भय हो? प्रजा–पालिनी दयामयी देवी की जय हो ।।

tur k% जय हो !

'निष्क्रिय प्रतिरोध' गुप्त जी का दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की स्थिति पर लिखा गया नाटक है। नाटक का पात्र रामकृष्ण का कथन देखिए जो गुप्त जी की प्रसिद्ध रचना भारत–भारती की प्रतिध्वनि हैः

यदि हम हिन्दू होते, होता धरा पै वह कौन व्यक्ति जो यों दिखाता हमको स्वशक्ति
जो आँख कोई हम पै उठाता, किए हुए फल शीघ्र पाता।।

गुप्त जी का हिन्दू–बोध इन पंक्तियों में अत्यंत तीव्रता के साथ व्यक्त हुआ हैः

रामकृष्ण : (घर की ओर जाता हुआ) इन लोगों की बदमाशी तो देखो। न कुछ बात न चीत, फिर भी हमें पीट डाला, परंतु यह ठीक ही हैः

जब नहीं हममें पुरुषत्व है, न कुछ भी अवशिष्ट महत्व है,
फिर सहें हम जो जितनी व्यथा, सतत है कम ही वह सर्वथा।।

रामकृष्ण का क्षोभ देखिए, वह कहता है– क्या हम यहाँ उन ट्राम गाड़ियों में दूने दाम देने के लिए तैयार रहने पर भी न बैठ सकते जिनमें यूरोपियनों के कुत्ते भी बैठ सकते हैं।

होगी ऐसी कौन जाति अधमाधम जग में, जो ऐसा अपमान सहे संतत पग पग में।
क्या अब हमने सभी मनुजता अपनी खोई, सह सकता क्या घोर लाञ्छन ऐसा कोई।।

वह कहता है कि यह सब ठीक ही हो रहा है। संसार अब हिंदुओं को खूब पददलित करे। अब तो उनका सभी गौरव लुप्तप्राय हो गया है। अब हम हिन्दू वे हिन्दू नहीं हैंः

जाते हुए जो न कहीं रुके थे, सम्पूर्ण संसार कंपा चुके थे,
सारी धरा के नरपाल थे जो, स्वशत्रुओं के हित काल थे जो।

रामकृष्ण का यह क्षोभ या फिर उनका स्व को कोसना निष्प्राय नहीं है। ये सारे धिक्कार हिन्दूओं को, भारतीयों को जगाने के उपक्रम हैं। किसी को यदि उसकी ताकत का एहसास दिलाया जाता है तो जागरूकता की परिणति कार्यों में दिखती है; उसी प्रकार जब किसी की कमजोरी को उजागर किया जाता है तब भी सुधार के आसार बनते हैं। रामकृष्ण का बार–बार दीनता की ओर ईशारा करने का भी परिणाम निकलता है और लोग संगठित होने की ओर प्रवृत्त होते हैं।

fu"d"kZ

मैथिलीशरण गुप्त जी के नाटकों में समसामयिक समस्याओं को उठाया गया है, साथ ही उनके समाधान सुझाने के भी समानान्तर प्रयास किए गए हैं। भाषा संवादों के क्रम में भी पद्यात्मक अवश्य है परंतु वे रसानुभूति में बाधक नहीं होते। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मैथिलीशरण गुप्त जी के विराट कवि व्यक्तित्व के आगे उनके भीतर का नाटककार छिप गया है। गुप्त जी ने मुख्यतः अपने कथ्यों को सामने रखने का प्रयास किया है और अपने इस उद्देश्य में उन्हें सफलता मिली भी है।

lanHkZ lwph

1. सरस्वती, जनवरी 1905 ई.।
2. मैथिलीशरण गुप्त काव्य संदर्भ कोश, डॉ नगेन्द्र।
3. मैथिलीशरण गुप्त के नाटक।
4. हिन्दी नाटक कोश।

****